Knowledge Consortium of Gujarat
Department of Higher Education - Government of Gujarat
Journal of Multi-Disciplinary - ISSN : 2279-0268

Continuous Issue - 21 | August – September 2017

जीवनशैली के विकारों के शमन एवं प्रबंधन में जैन एवं गांधी दर्शन

(एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

जीवनशैली के विकारों का शमन एवं प्रबंधनः वर्तमान की महती आवश्यकता-

हमारी जीवनचर्या जीवन को जीवंत बनाए रखने के लिए है। किन्तु जब हमारे रहन-सहन के तौर-तरीकों से यह फलित नहीं होता तब निश्चय ही इस दिशा में सोचने को विवश होना पड़ाता है। आजादी के लगभग 6 दशक से अधिक बीत जाने बाद, तथाकथित विकास के पथ पर सतत अग्रसर होने बाद, हमारी देश के नीति-निर्धारकों ने पाया कि हमारी आधिकांश आबादी केंसर, मधुमेह, हृदय रोग, उच्च रक्तचाप तनाव आदि मस्तिष्क के रोगों से ग्रसित है और इसका व्याप दिनों-दिन बढ़ता ही जा रहा है तब विषय विशेषज्ञो के साथ विमर्श में यह तथ्य निकलकर आया कि इसके पीछे मुख्य कारण जीवनशैली के विकारों का पनपना है जो हमारी लापरवाही, झूठी शान- मान व प्रतिष्ठा अथवा दिखावे का नतीजा है। आज जिनके पास धन धान्य है किन्तु उपयुक्त कर्मठ जीवनशैली नहीं है वे असमय में ही इन जान लेवा रोगों के शिकार बन रहे हैं और अभावों में जीवन यापन को विवश हैं। आश्चर्य तो इस बात का है उन्हें इसका पता तब चल पाता है जब स्थिति लगभग नियंत्रण से बाहर हो जाती है। यदि हम अपने सामाजिक सांस्कृतिक प्रतिमानों के अनुरूप अपनी जीवनशैली का नियमन करें तो हम जीवनशैली के विकारों का समुचित प्रबन्धन कर सकते हैं। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी अपनी संस्कृति की उपादेयता के संदर्भ में कहते हैं कि **मेरी यह दृढ़ मान्यता है कि हमारी संस्कृति के जितने समृद्ध भंडार भरे पडे हैं उतने किसी के पास नहीं हैं। हमने अपनी संस्कृति को पहचाना ही नहीं।.....हम अगर अपनी संस्कृति के साथ नहीं जिए तो एक समाज के रूप मे हम आत्महत्या की ओर अग्रसर होंगे।** स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू ने भी कहा था कि **हमारी संस्कृति कुछ ऐसी है कि हम गिरे, फिर उठे,फिर गिरे और उठकर चल दिए। हमारी संस्कृति के सिवा विश्व की किसी अन्य संस्कृति में कोई ऐसी संस्कृति नहीं जो गिरने के बाद उठी हो।** उपरोक्त कथन प्रमुख भारतीय दर्शनों में से एक जैन दर्शन प्रेरित जीवनशैली की प्रासंगिकता को प्रस्थापित करने की आवश्यकता को प्रकट करते हैं।

जीवनशैली के विकार.....

जीवन शैली को नियमित बनाने में, सुखमय जीवन व्यतीत करने में, सामुदायिक जीवन को शांतिमय बनाने में, प्रकृति के अवय़वों के अनुरूप जीवन को ढालने में जैन दर्शऩ व गांधी विचार आज भी प्रासंगिक हैं। एक ओर जैन दर्शन जीवन यापन के शाश्वत सैद्धान्तिक व्यवहारों की व्याख्या करके समुचित दिशा निर्देशन प्रदान करता है तो दूसरी ओर महात्मा गांधी वर्तमान समय की वह विभूति रहे हैं जिन्होंने अपने जीवन में सत्य व अहिंसा के प्रयोग करके उन सनातन सिद्धांतो को अपने जीवन में उतारा जो भारतीय संस्कृति साहित्य की अमूल्य निधि हैं तथा जिनके द्वारा जीवन शैली के प्रतिमानों को नियमित बनाया जा सकता है। महात्मा गांधीजी अपने आध्यात्मिक गुरू श्रीमद राजचन्द्रजी के विचारों से बहुत प्रभावित रहे हैं उनका मानना था कि आधुनिक जीवन शैली में व्यक्ति, समाज व समष्टि के पारस्परिक हितों के मध्य संघर्ष व विरोधाभास पनपता है, उसको समाप्त करते हुए ऐसे पथ को आत्मसात किया जा सकता है जिसमें सच्चा सुख, सर्व का सुख प्रकट होता हो। वर्तमान में सुख

समृद्धि की तीव्र लालसा व महत्वांकाक्षा में हम सभी भौतिकवादी व्यवस्था में सुख खोज रहे हैं जो अंततः मृगमरीचिका के सिवाय या उससे अधिक कुछ नहीं है जिसमें आवश्यकता संतुष्ट बाद भी अतृप्ति का अहसास बना रहता है। यह असंतुष्टि का ऐसा दलदल है जिसमें निकलने के प्रयास में व्यक्ति और अधिक धँसता चला जाता है। इन्हें पूरा करने की चाह में अपना समग्र जीवन होम कर बैठता है। उसे यह भी पता नहीं लगता कि जिसके लिए उसने यह पुरुषार्थ किया है वह मूल मकसद कब समाप्त हो गया, कब हम जाने अन्जाने इसे प्राप्त करते करते हिसांत्मक व असत्य आचरण कर बैठे। गांधी विचार व जैन दर्शन में जीवनशैली के विकारों के शमन एवं प्रबंधन हेतु कई सारे कारगर उपाय निहित हैं जिन्हें बाहर लाना न सिर्फ जरूरी है अपितु उसे समझना हमारा नैतिक दायित्व भी है तथा प्रासंगिकता की कसौटी पर यह हमारी महती आवश्यकता है।

शमन और प्रबंधन.....

जैन दर्शन उन व्यवहारों और विकृतियों को सुधारने में शमन रूपी अस्त्र के आचरण की वकालत करता है जिसके द्वारा जीवनशैली के आन्तरिक व बाह्य व्यवहारों को नियमित और परिशुद्ध बनाया जा सकता है। आरोग्य का अर्थ सिर्फ शरीर का जतन नहीं अपितु सकारात्मक जीवनशैली के द्वारा मन के विकारों का शमन करना भी है ताकि तन मन दोनों निरोगी रह सकें। आज की विलासितापूर्ण व आपाधापी की जीवनशैली में सब कुछ होने के बावजूद स्वास्थ्य की दृष्टि से निरा रीतापन दिखता है। जिस प्रकार धान्य उत्पादन हेतु वर्ष के वर्षा ऋतु के चार महीने निकल जाएं तो कुछ शेष नहीं रह जाता है ठीक उसी प्रकार मानव जीवन में से अनुशासित व सादगीपूर्ण जीवनशैली के पहलुओं को हटा लिया जाय तो वहाँ सुख की अपेक्षा नहीं की जा सकती। योग, आसन, योग्य आहार-विहार-निहार तो उत्कृष्ट जीवनशैली के अंग है ही किन्तु इसमें भी जीवनशैली से जुड़े अथवा उसको प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से प्रभावित करने वाले घटक भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। ये घटक मनोसामाजिक, मनोवैज्ञानिक, मनोभावनात्मक हैं जो व्यक्ति की सोच पर प्रभाव डालते हैं और कई बार तो इसके दबाब में जीवनशैली के विकार पनप जाते हैं। जैन दर्शन दृढ़ संकल्प के साथ इनको रोकने का उपाय बताता है जिसे शमन कहा जाता है तथा भविष्य में इसकी पुनरावृत्ति न हो इसकी सुनियोजित व्यवस्थाएं निर्धारित करता है जिसे प्रबंधन के दृष्टिकोण पर समझा जा सकता है। आज के आहार में न तो साधन-सामग्री के उपयोग का विवेक है न खाने में संयम और न ही भक्ष्य-अभक्ष्य या ऋतु वर्जन का विचार। जैन और गांधी दर्शन सादगीपूर्ण संयमित जीवनशैली अपनाने को लेकर दृढ़ प्रतिज्ञ हैं कि जीवन यापन के हर क्षेत्र में संयम का पालन यम नियम की भाँति अपरिहार्य है इसके साथ कोई समझौता नहीं हो सकता। जितने अंश में लचीलापन उतने ही प्रमाण में संकट की संभावना, यह एक सामान्य सिद्धान्त है।

जीवनशैली और आजीविका के मध्य संबंध तथा जैन दर्शन -

आजीविका एक आर्थिक अभिगम है किन्तु हरेक व्यक्ति की जीवनशैली एक सीमा तक इस घटक पर टिकी होती है। इस दृष्टि से देखें तो हम पाते हैं कि जीवनशैली का संबंध आजीविका के स्वरूप व परिमाण से होता है। जीवन निर्वाह हेतु आजीविका का पुरूषार्थ आवश्यक है किन्तु जीवन आजीविका के लिए नहीं अपितु आजीविका जीवन के लिए है इसका बोध भी जरूररी है। निःसंदेह पुरुषार्थ विहीन व्यक्ति की जीवनशैली आरोग्यप्रद नहीं हो सकती। जो व्यक्ति अपनी मूलभूत आवश्यकताओं का विचार किए बिना तथा आजीविका में साधन शुद्धि का विवेक रखे बिना मात्र किसी भी तरह से कमाने की आपाधापी में लगा रहता है तथा उसके लिए करने व न करने योग्य कामों में रत रहने से कोई गुरेज नहीं करता और न ही अन्य के अस्तित्व का विचार करता है ऐसे व्यक्ति की जीवन शैली में भौतिक एवं मनोवैज्ञानिक कारण जनित विकार उत्पन्न होते हैं जो उसे जीवन जीने के वास्तविक मकसद से दूर ले जाते हैं।

भारतीय संस्कृति के प्रमुख दर्शनों सहित जैन व गांधी दर्शन में भी आजीविका में साधन शुद्धि व संयमित आजीविका परिमाण का विचार किया गया है ताकि सभी को अपनी जरूरतों के मुताबिक अर्थोपार्जन मिल सके। जैन दर्शन में कहा गया है- अ**पनी शक्ति विचार परिग्रह थोड़ो राखे, दश-दिश गमन प्रमाण ठान तसु सीम न नाखे। ताहू में फिर ग्राम, गली, गृह बाग-बजारा, गमना-गमन प्रमाण ठान अन सकल निवारा।।- छहढाला।** यदि जीवन में आजीविका परिमाण की सीमा तय कर ली जाती है जो अपने हर कार्य को पर्याप्त समय दिया जा सकेगा तथा अन्य के साथ भी दया करूणा व न्याय का विचार संभव हो सकेगा। इस तरह की अहिंसक समाज रचना में कोई किसी से द्वेष नहीं करेगा, न ही अनुचित तरीके अपनाकर नुकसान पहुँचाने की कोशिश करेगा, खुद जीयेगा तथा दूसरों को भी जीने देगा, उसका व्यवहार दूसरों के लिए बाधित सिद्ध नहीं होगा। छहढाला में पं. दौलतराम जी कहते हैं कि ऐसा श्रावक इस युक्ति में वर्णित आचरण का अनुसरण करता है- **काहू की धन हानि किसी जय - हार न चिंते, देय न सों उपदेश होय अघ वनिज कृषि तें।।** हम अपने पारम्परिक स्थानीय आजीविका चक्र की ओर दृष्टिपात करे तो हम पाते हैं कि स्थानीय स्तर पर लोगों की आजीविका एक कड़ी परस्पर अवलंबित हुआ करती थी, अतिरेक संग्रहणवृत्ति की जगह धर्म व नीति सम्मत तरीके से जीवन निर्वाह के प्रतिमानों का पालन श्रद्धा व स्नेह के साथ किया जाता था जिससे समाज में विविध हस्तकलाएं फला-फूला करती थीं तथा समाज अहिंसक समाज रचना की ओर अग्रसर था। ऐसी जैन दर्शन प्रेरित जीवनशैली को विकार रहित रखने में मील का पत्थर साबित होती थी।

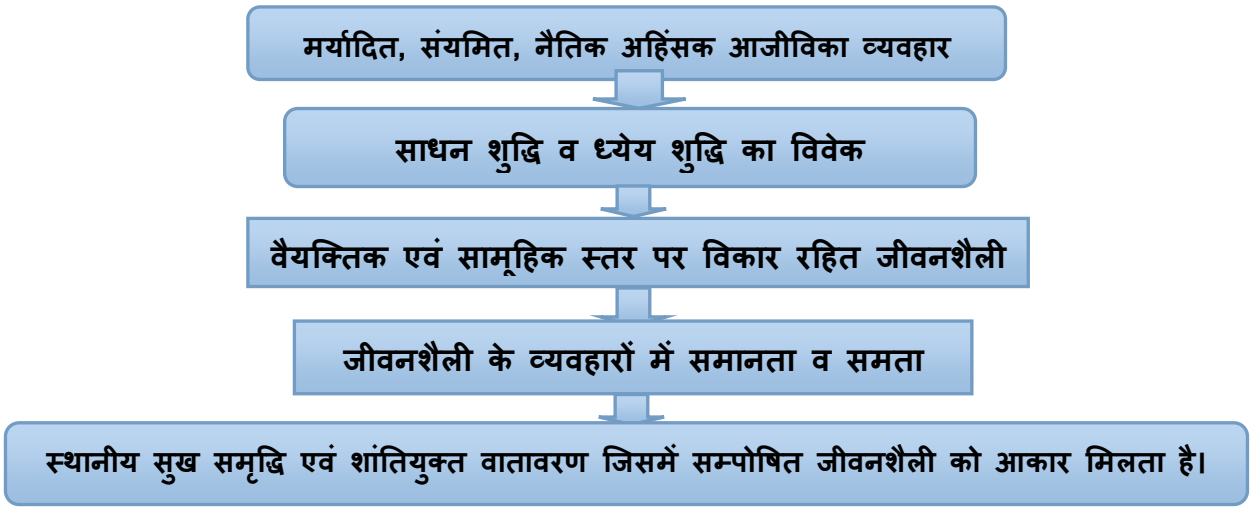

चित्र- विकार रहित जीवनशैली एवं सम्पोषित आजीविका व्यवहार के मध्य संबंध तथा जैन व गांधी दर्शन

यदि स्थानीय आजीविका के सम्पोषित व्यवहारों की कड़ी टूटती है तो सम्पूर्ण वातावरण विकृत हो जाता है। संतोष, समता व सहनशीलता, विश्वास व प्रेम के अभाव में जो बिखराव आता है वह जीवनशैली को अस्त-व्यस्त बना देता है एवं शरीर में कई सारे शारीरिक व मानसिक रोगों को जन्म देता है।

भौतिकतावादी जीवनशैली की लालसा → अपरिमित आजीविका व्यवहार →स्थानान्तरण दिखावा → अपने लिए समयाभाव के बहाने → श्रमरहित आलसी जीवन प्रतिष्ठा का प्रतीक → मनोवैज्ञानिक मानसिक विकार = अस्त-व्यस्त जीवन यापन के प्रतिमान। जीवनशैली विकारों को प्रभावित करते जैन दर्शन के प्रमुख अभिगमः कषाय, मद एवं षट लेश्या-

आज के अति भौतिकतावादी आधुनिक जीवन में प्रवेश कर चुकी 4 कषाऐं और अष्ट मद जनित जीवन शैली के विकारों के वे मानसिक कारण हैं जिनसे शारीरिक स्थिति का भी पतन होता है। इनके चलते मानवकी जीवनशैली प्रत्यक्ष व परेक्ष रूप से नकारात्मक दिशा में प्रभावित होती है। जीवनशैली के विकारों की अनुभूति के स्तर का षट-लेश्याओं के आधार पर मनोवैज्ञानिक अथवा मनोसामाजिक विश्लेषण किया जा सकता है। ये लेश्याएं कषायादिक परिणामों के मापन के आधार पर विश्लेषण का स्पष्टीकरण करती हैं। क्रोध, मान, माया और लोभ इन चार कषायों के वशाभूत होकर व्यक्ति अपनी जीवनशैली को मानसिक व शारीरिक तौर पर नर्क बनाता रहता है तो कभी आठ मदों (पिता व मामा आदि के ताकतवर व समृद्ध होने का मद, पिता के राजा होने का मद, रूप का मद, ज्ञान का मद, तप का मद, धन का मद और बल का मद) के वशीभूत होकर संवेदनशील हुए ऐसे कार्यों में मगशूल रहता है जो उसके लिए, समाज के लिए व सृष्टि के घातक सिद्ध होते हैं।

गांधीजी के एकादशव्रत और सम्पोषित जीवनशैली-

सत्य के प्रयोग, दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह, रचनात्मक कार्यक्रम, आरोग्य की कुंजी, अनासक्ति योग, मंगल प्रभात (एकादश व्रतों का समुच्चय) आदि गांधी साहित्य गांधीजी जीवन की वह तासीर समाज के सामने रखता है जो यह निर्देशित करती है कि कैसे जिया जाय जिससे सही मायनों में जीवन की सार्थकता सिद्ध हो सके। गांधीजी जीवन में भौतिकवादिता पर संयम के साथ साथ जीवनशैली में आध्यात्मिकता के पुट को साथ रखकर देखते हैं। वे ऐसी जीवनशैली को साकार करने के पक्षधर थे जो वैयक्तिक व सामूहिक विकास इस प्रकार कर सके जिसमें किसी का अस्तित्व बाधित न हो तथा प्रकृति से समस्त घटक संरक्षित रहें। इसमें वे अहिंसक समाज रचना की झलक पाते हैं। गांधीजी ने आश्रमवासियों को स्वस्थ जीवनशैली अपनाने हेतु एकादशव्रतों को जीवन में स्थान देने की पुरजोर वकालत की यथा- सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रहम्चर्य, अपरिग्रह, शरीर श्रम, अभय, स्वदेशी, अस्वाद, स्पर्श भावना (अश्पृश्यता निवारण) एवं सर्वधर्म समभाव (कोमी एकता) तथा इन सभी व्रतों के पालन के लिए नम्रता को अनिवार्य बताया। इन सभी में स्वस्थ एवं सम्पोषित जीवनशैली के लिए आवश्यक उन सभी घटकों को एकीकरण वर्तमान में पनप रहे जीवनशैली के विकारों के शमन एवं प्रबंध मिल सकता है जिसकी तलाश आज सभी जगह से हताश और हारे हुए व्यक्ति को अंतिम विकल्प के रूप में होती है।

जैन दर्शन और गांधी विचार दोनों में काफी हद तक समानता है इनके आलोक में वर्तमान की आधुनिकतावादी जीवनशैली के विकारों को रोकने के लिए इनकी भूमिका को समझा जाना योग्य है। गांधीजी अपने अनुभव एवं प्रयोगों के आधार पर कह सके थे कि मेरा जीवन ही मेरा संदेश है जिसे सम्पोषित जीवनशैली के प्रतिमानों की स्थापना के संदर्भ मे भी पूर्ण श्रद्धा, विवेक व तर्क के साथ परखा जा सकता है।

जीवनशैली के विकारों के शमन एवं प्रबंधन जैन दर्शन प्रेरित की प्रक्रिया-

जैन दर्शन आधारित जीवनशैली में विकारों के उद्भव, शमन एवं प्रबंधन को लेकर निम्न पक्रिया होती है- **आश्रव---बंध---संवर----निर्जरा एवं अंतिम लक्ष्य की प्राप्ति**

आश्रव वे स्रोत कहे जाते हैं जिनके माध्यम व प्रभाव से जीवनशैली के विकारों के जन्म में (बंध में) कारणभूत होते हैं। जीवनशैली के विकारों के निवारण हेतु सर्वप्रथम आश्रव के स्रोत की पहचान जरूरी है और इसके लिए आवश्यक सम्यक जन चेतना। छहढाला की पांचवी ढाल में कहा गया है कि योग-संयोग की चपलता के कारण **आश्रव** का उदय होता है अर्थात् जीवनशैलीजनित विकारों का उद्भव होता है। आश्रव की परिणति बन्ध के रूप में होती है जिसे विकारों के स्परूप में परिलक्षित किया जा सकता है।

आश्रव निरोध संवरः।। तत्वार्थसूत्र।।

आश्रव को राकने की क्रिया को जैन दर्शन में **संवर** कहा गया है। आश्रव के स्रोत की पहचान करके जब व्यक्ति इससे उबरने का दृढ़ संकल्प कर लेता है तो सर्व प्रथम उस जीवनशैली के विकार संबंधी बन्ध की स्थिति को रोकने का जतन करना होता है यह दशा संवर कहलाती है। यहाँ से एवं इसके बाद शुरू होता है जीवनशैली के विकारो का शमन। जैन दर्शन की सैद्धान्तिक दृष्टि से शमन के दो स्वरूप होते हैं स्थाई व अस्थाई। प्रथम स्वरूप को जैन दर्शन की भाषा में **क्षय** कहा जाता है और इसके लिए व्यक्ति को **सकाम निर्जरा का पुरूषार्थ** आचरण में लाना होता है। इस स्थिति में दृढ़ प्रतिज्ञ व्यक्ति जीवनशैली के विकारों से बाहर निकलने हेतु प्रबंधकीय प्रतिमानों एवं सुनियोजित तौर-तरीकों को आकार देता है। दूसरा स्वरूप उपशम है जिसका प्रभाव स्थाई नहीं होता। इसमें समय, संयोग व वातारण मिलने पर पुनः उन विकारों की तरफ वापस मुड़ जाने का खतरा बना रहता है।

तपसा निर्जरा।। तत्वार्थसूत्र।।

जीवनशैली के विकारों के प्रबंधन में जो क्षय पद्धति का अनुसरण करता है वह सकाम निर्जरा के द्वारा विवेक पूर्ण कर्मठ प्रयासों को ग्रहण करता है तथा स्थितप्रज्ञ रहकर (राग-द्वेष रहित) स्व-पर का जीवन सुखमय बना लेता है। वह सभी प्रकार के शारीरिक मानसिक विकारों से परे रहकर जीवन के वास्तविक लक्ष्य की सिद्धि करके जीवन को सफल बनाता है। जीवनशैली के विकारों का क्षय जीवनशैली प्रबंधन अथवा क्रियान्वयन प्रक्रिया का मुख्य एवं अनिवार्य चरण है। इस चरण में सतत आत्म-निरीक्षण, स्व- मूल्यांकन, आतन्तरिक प्रेरणा, सकारात्मक मनोवृत्ति एवं मानवीय मूल्य आधारित आदि मनोवैज्ञानिक पासाओं को अपनाता है। जीवनशैली के विकारों के प्रबंधन में व्यक्ति, समाज व समष्टि के भेद को समाप्त कर उच्च आदर्श स्थापित कर लेता है। इस विकार रहित अवस्था में ध्यान ध्याता और ध्येय के मध्य में कोई भेद नहीं रह जाता, सात्विक गुणों की अनुभूति होती है तथा मन - चित्त की असीम शांति प्राप्त होती है। अब प्रश्न यह उठता है कि सैद्धान्तिक रूप से जानकार होने पर भी लोग सम्पोषित जीवनशैली को क्यों नहीं अपना रहे? इसके पीछे निम्न लिखित कारण प्रतीत होते हैं-

- विजन, दृष्टिकोण एवं सोच का अभाव
- प्रभाव का आडम्बर, प्रथा, जड़ता से परे रखकर देखने की हिम्मत न होना
- क्रांति की पहल में भागीदारी व उत्साह का अभाव- लोग क्या कहेगें.... का विचार मुख्य अवरोधक है सुधार की पहल में।
- साथियों और भटके हुए लोगों के साथ उपेक्षित व्यवहार, नकारात्मक मनोवृत्ति, सहोदर की जगह उपदेशात्मक शैली जो असरकारक सिद्ध नहीं होते।
- नेतृत्व के उपदेशों की कथनी करनी में भेद (ज्ञातव्य है गांधीजी ने एक मां के कहने पर उसके लड़के को उस समय तक गुड़ न खाने की सीख नहीं दी जब तक कि उन्होंने खुद खाना नहीं छोड़ दिया किन्तु अफसोस आज के सुधारकों में ये मूल्य व मनोवृत्ति देखने को नहीं मिलती)
- नेतृत्व में आदर्श स्थापित करने की दृढ़ इच्छाशक्ति, संकल्पशक्ति का अभाव, दिखावा, अहम तुष्टि झूठी मान-प्रतिष्ठा का लोभ आदि को प्राथमिकता

अध्ययन-अध्यापन, सीखने-सिखाने की सभी प्रमुख विधाओं का सम्बन्ध मानव जीवन को सभ्य और सुखमय बनाने से जुड़ा हुआ है। इनसे व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है। सम्पोषित जीवनशैली अर्थात जीवन यापन की अच्छी आदतों का विकास। जिसके चलते मानव जीवन एवं सहचरी सृष्टि का अस्तित्व कायम रहता है। वर्तमान उपभोक्तावादी जीवनशैली की चकाचौंध में "लोग नाक बेचकर नथ पहन लेने" में ही अपना भला समझने लगे हैं। इससे जीवन में कई जटिलताएं खड़ी हो गई हैं। पहले वे लापरवाही व विवेकहीनता के चलते

लोग रोगों को आमंत्रित करते हैं और फिर दवा खोजने की कवायत में जीवन को घुलाते जाते हैं। किन्तु इसका इलाज बाहर नहीं अपितु अपने अंदर ही निहित है जिसे सम्पोषित जीवनशैली के प्रतिमानों के आधार पर समझा जा सकता है।

वर्तमान में यदि अनियमित जीवनशैली के परिणामों व कारणों का विश्लेषण करें तो हम पाते हैं कि जीवनशैली जनित विकारो ने सृष्टि के संतुलन को बिगाड़ा, मानव समाज को कई सारे रोग केंसर, हृदयरोग, उच्च व निम्न रक्तचाप, मस्तिष्क के रोग, तनाव, संघर्ष आदि भेंट में दे दिये जिनका सही उपाय खोजते खोजते वह थक चुके हैं। तथाकथिति भौतिकतावादी विकास में यह परिकल्पना की जाती है समृद्धि से सुख आना चाहिए किन्तु वास्तव में जब परिणाम इसके उलट ही मिलने लगें, तब सोचने, चिन्तन करने, मनन करने व मंथन करने को मजबूर हो जाना पड़ता है। आज हम देखें कि जितनी भौतिक सुख समृद्धि के साधन बढ़े हैं जीवनशैली जनित विकारों में उतना ही इजाफा हुआ है। जैन दर्शन और गांधीविचार जिस संयममय जीवन व संतुलित जीवन शैली की सदैव वकालत करते रहे हैं तथा जिससे जीवनचर्या का नियमन सकारात्मक दिशा में होता है, वह निःसंदेह मानव समाज के लिए संजीविनी का काम कर सकता है। अहिंसात्मक व तनाव रहित जीवनशैली के हित-पोषक प्रमुख भारतीय दर्शनों में जैन दर्शन का अग्रणी स्थान रहा है। मानवीय जीवनशैली को नियमित बनाने तथा इसके सुचारु संचालन हेतु जैन दर्शन में निहित जीवन शैली प्रबन्धन के प्रतिमानों को समझना आवश्यक है। महात्मा गांधीजी जो जीवनशैली को नियमित व अहिंसात्मक बनाने के लिए ता उम्र प्रयोग करते रहे उनके जीवन प्रसंगों से सीख लेकर आज का मानव समुदाय अपने वैयक्तिक व सामूहिक जीवन को जीवनशैली जनित विकारों से मुक्त कर सकता है।

गीता के अनुसार व्यक्ति का आचार-विचार सात्विक होना जरूरी है। इस संसार में तीन प्रकार की मनोवृत्ति वाले लोग पाये जाते हैं- सात्विक, राजसिक व तामसिक। इसमें सात्विकवृत्ति संयममय स्वस्थ जीवन शैली का प्रतिनिधित्व करती है। राजसिकवृत्ति भोग-विलासिता का पोषण करती है जो देखने में तो अच्छी किन्तु परिणाम खराब ही लाती है। और तीसरी है तामसिक जिसमें साधन शुद्धि के विचार का अभाव दिखता है। आज के व्यक्ति का भोजन ही तामसिक नहीं हुआ अपितु उसके विचार व व्यक्तित्व भी तामसिक हो चुका है। एक सामान्य धारणा के अनुसार मनुष्य चार प्रकार के होते हैं-

भाग्यशाली वे हैं - जिनके पास धन है।
सौभाग्यशाली वे हैं - जिनके पास धन के साथ स्वास्थ्य है।
महाभाग्यशाली वे हैं - जिनके पास धन, स्वास्थ्य व धर्म है।
दुर्भाग्यशाली वे हैं - जिनके पास उपरोक्त में से कुछ भी नहीं है।
कहा भी है- " पहला सुख निरोगी काया....."

भारतीय जन मानस की विरासत में आरोग्य की विभावना केन्द्र स्थान में रही है। कहा जाता था कि "चरित्र गया तो सब कुछ गया, स्वास्थ्य गया तो कुछ गया और धन गया तो समझो कुछ नहीं गया।" हालांकि आज के भौतिकवादी युग ने इस सूक्ति को एकदम उलटरूप में अपनाकर चरित्र के स्थान पर धन को लाया गया है फिर भी **आरोग्य** की जगह मध्य में सुरक्षित है। खाओ पीओ **और मौज करो** की जीवनशैली भी शरीर के जतन के लिए खर्च पर बल देती है। इन सभी दलीलों से यह सिद्ध होता है कि आरोग्य के संरक्षण का मानव जीवन में कितना महत्व है। आज हम धन के पीछे ऐसे पगला गये हैं कि उसे समुचित रूप से अपने शरीर के उपभोग में लेने का भी समय हमारे पास नहीं हैं। अजीब तरह की भागम-भाग और आपाधापी मची हुई है आज के इस

व्यस्त वातावरण में। जबकि आरोग्य स्वराज्य का आधार हमारी सादगीपूर्ण व संयमित भोजन व्यवस्था तथा कर्मठ जीवनशैली है। जिस प्रकार ताला-चाबी, समस्या-सामधान शब्द साथ साथ प्रयुक्त होते हैं ठीक उसी प्रकार रोग और आरोग्य भी एक साथ रखे जा सकते हैं। जिन घटकों के प्रति कतिपय लापरवाही व अनदेखी की जाती है वह रोगों को जन्म देती है वहीं पर थोड़ी सी स्वाभाविक सावधानी व विवेक के उपयोग से निरोगी होने के द्वार भी खुल जाते हैं। **हम राजनैतिक रूप से स्वतंत्र हो गये, किन्तु आज हम अपने गिरेबां मे झांक कर देखे और गंभीरता से विचार करें तो हम पायेंगें कि आर्थिक रूप से भी सुदृढ़ होने पर भी हमें स्वस्थ जीवनशैली के सृजन व संचालन हेतु जो सामाजिक-सांस्कृतिक व धार्मिक विरासत मिली हैं उसके अनुरूप संयममय जीवनशैली के प्रतिमानों को ठीक से सहेज नहीं पा रहे हैं और इसके विपरीत पाश्चात्य सभ्यता की प्रतिकूल जीवनशैली का अनुकरण कर रोगों की गुलामी की दासता में खुशी खुशी धंसते चले जा रहे है।** स्थिति कुछ इस तरह है जैसे कुएं के ऊपर लगी गोल गिरारी पर बैठा तोता जब अपने वजन से नीचे की ओर चला जाता है, चिल्लाता रहता है कि मैं मर जाऊँगा यह गिरारी मुझे छोड़ नहीं रही है मैं इसके चँगुल से मुक्त नहीं हो सकता। किन्तु यहाँ वास्तविकता यह है कि गिरारी को स्वयं उसने ही पकड़ रखा है यहि वह चाहे तो उसे छोड़ने का जतन करके इस बिडम्बना से बाहर निकल सकता है। ठीक इसी प्रकार जीवनशैली के विकारों की श्रंखला हमने अपने आसपास स्वयं ही खड़ी कर रखी है। आश्चर्य की बात तो यह है कि समाज में यह चलन भी चल पड़ा है कि लोग बड़े रोग को बड़ी प्रतिष्ठा व सिद्धत के साथ जताते हैं। आधुनिकता की अंधी दोड़ में हर कोई अपने शरीर की अनुकूलता को भूलकर आलसी बनता जा रहा है, विलासिता का पोषण कर समाज में वर्गवाद व आरोग्यसंबंधी अराजकता का प्रसार तेजी से कर रही है। यदि समय रहते आज अपने जीवनशैलीगत आचार-विचार को पुनः परिभाषित नहीं किया तो आरोग्यपतन के गहरे गर्त में गिरने से हमें कोई नहीं बचा सकता। इसलिए आज इस विषय की चर्चा आज आमजन के हित में तथा अपनी सांस्कृतिक विरासत की पहचान को बनाए रखने हेतु अत्यंत प्रासंगिक प्रतीत होती है। तो चलो जरा वर्तमान की दशा - दिशा का अवलोकन व साक्षात्कार कर लिया जाय।

वर्तमान जीवनशैली- क्या बदला? जरा विश्लेषण करें.....

हमारा रहन-सहन, खर्च करने की हमारी प्राथमिकताएं, पोष्टिक आहार की जगह जंक फूड का चलन, शुद्ध-अशुद्ध भोज्य पदार्थों के उपयोग में विवेकहीनता, पदार्थों की मर्यादा का विचार न होना, होटलों में खाने का चलन, बैठकर शांति से भोजन करने की बजाय चलते-फिरते जल्दबाजी में भोजन, सामूहिक समारोहों में रात्रि अथवा आरोग्य की दृष्टि से असमय में भोजों का चलन, जीवन को निरोगी बनाए रखने हेतु समय व श्रम साध्य व्यवहारों तथा शारीरिक योगिक क्रियाओं का .अभाव.....। यह सब धार्मिक दृष्टि से तो वर्जनीय है ही किन्तु स्वास्थ की दृष्टि से भी उतना ही अहितकर है। अफसोस ! हम सभी अंधी दौड़ के साथ इन वर्जनीय व्यवहारों को प्रतिष्ठा का प्रतीक मानकर इस मार्ग पर अनवरत बढ़ते जा रहे हैं। सभ्यता के क्रम में हम ऐसे समाज के प्रतिनिधि रहे हैं जहाँ आरोग्यप्रद जीवनशैली हमारी समृद्ध विरासत रही है, दुनिया जिसकी मिशाल देती आई है, जिसमें संयम का अनूठा संयोजन है, आरोग्य जगत जिसमें जीने की राह खोज रहा है- यथा- सूर्यास्त से पूर्व भोजन, कम मसाले का सात्विक भोजन, भोज्य पदार्थों का शोधकर के उपयोग व स्वच्छता व शुद्धता का पूरा ध्यान, पानी छानकर पीना अथवा प्रासुक जल का सेवन, शरीरश्रम के अनुरूप ही भोजन, भोजन के मध्य समयान्तराल आदि घटक हमारी जीवन-यापन व्यवस्था के अभिन्न अंग हैं जिनकी पालना जैन दर्शन सहित अन्य भारतीय दर्शनों में अपेक्षित रही है। भारतीय संस्कृति में भी सादा जीवन, सादा भोजन व उच्च विचारों को अहम् स्थान दिया गया है। संयममय जीवन और आरोग्य की दृष्टि से जैन दर्शन गरिष्ठ भोजन के त्याग का विचार करता है ताकि विचारों में विकार न आ सके। जैसे जैसे श्रावक कर्म की उत्कृष्टता बढ़ती है वैसे वैसे इस

गरिष्ठता का प्रमाण घटता है। धार्मिक तौर पर सप्ताह में अष्टमी- चतुर्दशी के उपवास या व्रत का चलन भी शरीर शुद्धि की दृष्टि से अनिवार्य एवं महत्वपूर्ण है। कुछ वानगी अपनी वर्तमान जीवनशैली की देखते हैं जो हमारे शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित कर रही हैं।

(अ) शरीरश्रम को कम करनेवाली विलासतापूर्ण व आलस्यजनित जीवनशैलीः रोगों का घर-

भौतिकवाद के प्रति बढ़ती आसक्ति की वृत्ति ने ढेर सारे रोगों को जन्म दिया है। शरीर को न हिलाना पड़े, चलना न पड़े, देर से सोना, देर से जागना, हर काम में यंत्रो की मदद लेना आदि आदतों ने शरीर को नाकारा बना दिया है। कब्ज, कमर दर्द, घुटनों का दर्द, मोटापा, तनाव, चिड़चिड़ाहट, गुस्सा, केंसर, मधुमेह व हृदय आदि रोग हमारी विलासितापूर्ण जीवन शैली का परिणाम है। इस समस्या से निजात पाने के लिए केन्द्र सरकार ने विगत कुछ वर्षों से केंसर, मधुमेह व हृदय रोग पर नियंत्रण एवं उन्मूलन हेतु एक मेघा कार्यक्रम प्रारम्भ किया है जिसमें शरीर को निष्क्रिय बनाने वाली जीवन शैली को बदलने पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। अब जरा विचार करो कि **समृद्ध जैन दर्शन व गांधी विचार प्रेरित जीवन शैली** इन भयावह रोगों के निवारण में कितनी कारगर सिद्ध हो सकती है। कम खर्चा और स्वस्थ तन-मन, आप भी खुश और आपके अपने भी खुश फिर इस साधना के संयममय अनुशासित पथ से हम दूर क्यों भाग रहे हैं? क्यों हमें लंबे समय में होने वाले नफा नुकसान का भान नहीं है? अरे ! आर्थिक नुकसान की भरपाई तो हम किसी दूसरे धंधे के माध्यम से भी कर सकते हैं किन्तु आरोग्य की क्षति की भरपाई नहीं की जा सकती क्योंकि एक जन्म में एक ही शरीर प्राप्त होता है जिसके माध्यम से साधना का पथ तय करना होता है।

(ब) खाने के लिए जीना बनाम् जीने के लिए खाना-

आज की जीवन शैली में हम खाने के लिए जीने लगे हैं। आरोग्य के लिए नहीं अपितु जीभ के चटखारे के लिए पेट को गटर की तरह इस्तेमाल करके खाने तथा न खाने योग्य सभी तरह के पदार्थों के कचरे से भरने में लगे हैं, उदर को कब्रिस्तान बनाकर रख दिया है। जबकि जैन दर्शन तो कहता है कि जीने के लिए जितना जरूरी है उतना ही खाओ। "जा जिभ्या के लोलुपी ते सब जग के दास, जिन जिभ्या वश में करी तिनको सब जग दास।" यह कहावत हमारे आरोग्य चारित्र के विकास पर केन्द्रित है किन्तु दुर्भाग्यवश हम जानबूझकर जिभ्या की गुलामी के दलदल में फँसकर रोगों की दासता के शिकार बनते जा रहे हैं।

(स) आहार-विहार व निहार के मध्य योग्य संतुलन का अभाव-

नियमित शरीर शुद्धि की दिशा में उपवास-व्रतादि का घटता चलन. नई पीढ़ी में इस प्रक्रिया के प्रति घटती श्रद्धा, असंयमित जीवन प्रणाली आहार-विहार व निहार में असंतुलन का कारण है जिसके द्वारा शरीर और विचारों की शुद्धता भी बाधित होती है। आज का समाज आपाधापी की जिंदगी में चाहे-अनचाहे, जाने-अनजाने इस असंतुलन के परिणामों का भोग बन रहा है। ज्ञातव्य है कि विचार शुद्धि और शारीरिक स्वास्थ्य के मध्य सीधा संबंध है। व्रत करने की प्रक्रिया जितनी जैन दर्शन की स्थापित परम्पराओं के अनुकूल है उतनी ही वैज्ञानिक भी है जिसमें नियत समय पर शुद्धता व स्वच्छता के साथ भोजन ग्रहण करने की विभावना का स्पष्टीकरण निहित है। आरोग्य स्वराज्य के माध्यम से इसी अवधारणा को पोषित करने का जतन किया गया है। आज डॉक्टरी सलाह के तहत लोगों को ऐसा करने में जरा भी हिचक नहीं होती। डाइटिंग की फैशन में पोषकता व सादगी दरकिनार होती जा रही है। न आहार की योग्य चर्या है न विहार का समय इसलिए अधिकांशतः निहार बाधित पाया जाता है जो सिरदर्द, तनाव, अनिद्रा आदि जीवनशैली-जनित विकारों को जन्म देती है।

(द) घर की बजाय होटल- ढाबों में भोजन - शान का प्रतीक

आज का युवा घर के शुद्ध भोजन को उपेक्षित कर होटल ढाबों व चाँट-पकौड़ी के ठेलों पर मिलने वाले भोज्य पदार्थों को खाने में अपनी शान समझता है। व्यापारिक उद्देश्य पूर्ति हेतु संचालित इन दुकानों में शुद्धता, स्वच्छता और पोषकता की कितनी गारंटी दी जा सकती है, यह तथ्य तो किसी से छिपा नहीं है। फिर मितव्ययता की दरकार ही कहाँ और किसे है? एक होड़ सी चल पड़ी है इस रास्ते पर आँखमूंद कर चलने की। आप यह भी कह सकते है कि पैसा हमारा है हम चाहें कुछ भी खाएं इससे किसी की सेहत पर कोई फर्क नहीं पड़ना चाहिए। अरे भाई ! बहुत फर्क पड़ता है कतिपय धनवान लोगों के इस आचरण से। मध्यम व गरीब वर्ग इनकी शान में अथवा इनके समकक्ष समझे जाने की लालसा में अपनी दमित इच्छाओं को पूरा करने में अपनी आय का बड़ा भाग ऐसे भोजन स्थलों और प्रतिमानों पर खर्च कर डालता है जहाँ उसको तनिक भी पोषण नहीं मिलता। इस प्रकार एक बड़ा वर्ग महज सामाजिक प्रतिष्ठा बनाए रखने की खातिर इस बिन-आरोग्यप्रद आचरण करने को विवश होता है। जबकि वह तन-मन को निरोगी रखते हुए इस पैसे की बचत करके जीवन की अन्य महत्वपूर्ण आवश्यकताओ को पूरा करके जीवन में मितव्ययता, पोषण, शुद्धता व स्वच्छता का आदर्श अन्य वर्गों व आने वाली पीढ़ी के सामने गर्व से रख सकता था। अतः सबलों को चाहिए कि अकूत या पर्याप्त धन-सम्पत्ति होने के बावजूद वे संयमित व्यवहार कर अपने स्वास्थ्य का जतन करे तथा अन्य लोगों के लिए भी प्रेरणारूप बने।

सम्पोषित जीवनशैलीः जैन व गांधी दर्शन में निहित जीवन जीने के प्रतिमान-

हम अपनी जीवनचर्या की शरूआत परमपिता परमेश्वर की प्रार्थना से सकारात्मक ऊर्जा प्राप्त करके करते हैं जो हमारा मनोबल बनाए रखने और चित्त शुद्धि में सहायक है। जैन धर्म में जीवन जीने के जिन प्रतिमानों को समझाया गया है उससे शारीरिक - मानसिक तथा आध्यात्मिक स्वास्थ्य बेहतर रह सकता है। सुदृढ़ समाज की रचना हेतु आरोग्य स्वराज जरूरी है। "जैसा खाओ अन्न वैसा होवे मन। जैसा पीवो पानी वैसी बोलो बानी" की उक्ति एकदम सटीक है। समाज में अराजकता व वैमनस्य का कारण अविवेकपूर्ण वाणी संचार है जो तनाव, ईर्ष्या और गुस्सा को जन्म देती है तथा स्व-पर का अहित करती है। भोजन योग्य पदार्थ तथा पदार्थ संयोजन के साथ साथ भोजन बनाने वाले एवं भोजन ग्रहण करने वाले की भावनाऐं भोजन की गुणवत्ता और पोषण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसी क्रम में रसोई स्थल की शुद्धता-स्वच्छता, खाने हेतु बैठक व्यवस्था, खाना परोसने व खाने का ढंग आदि घटकों का आहार-विहार- निहार का संतुलन बनाए रखने का जतन अहम् स्थान रखता है। हमारे पारम्परिक व्यवहारों में चौका शब्द का प्रयोग रसोई व्यवस्था के संदर्भ में किया जाता था। इसमें वस्तुतः 4 पासाओं का समावेश होता है- यथा द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की शुद्धता। अर्थात् जिस सामग्री का उपयोग किया जा रहा है वह उत्कृष्ट गुणवत्ता वाली हो, जिस स्थान का उपयोग किया जा रहा है वह स्वच्छ हो, उपयुक्त समय पर रसोई बनायी जाती हो तथा तैयार करने वालों की भावनाओं की पवित्रता भी सुनिश्चित हो। सम्पोषित आहार व्यवस्था के पटल पर जैन समाज के पारम्परिक प्रतिमानों का परिचय इस प्रकार समझा जा सकता है-

1. **भोजन पकाने का स्थान-** रसोई में बँधी सफेद चाँदनी जैन बहनों की रसोई की पहचान थी जिसमें शुद्धता व स्वच्छता का पूरा पूरा ध्यान रखा जाता था। आज तो बहनें चप्पल पहननकर रसोई में जाने से कोई गुरेज नहीं करती। नहाने आदि की शुद्धता को नई पीढ़ी परम्पारगत चोंचलो से अधिक नहीं मानती। वैज्ञानिक तथ्य यह है कि यदि अपनी विरासत के अनुरूप रसोई स्थल की शुद्धता-पवित्रता का ध्यान रखे तो सम्पूर्ण रसोई बैक्टेरिया मुक्त बन सकती है। जिससे भोजन सामग्री तैयार करते समय सूक्ष्म जीवादि कीड़े-मकोड़े पड़ने की संभावनाएं नहिंवत हो जाती हैं।

2. **बैठकर भोजन बनाने की व्यवस्था-** गृहणियां बैठकर रसोई के दैनिक कार्य किया करती थीं इस अवस्था में पीठ व घुटने के स्थिति शरीर की अनुकूलता के अनुसार रहती थी। इससे शरीर में अनावश्यक थकान नहीं होती थी, जोड़ों व कमर का दर्द नहीं होता था तथा भोजन सामग्री पर यथोचित ध्यान दिया जा सकता था।
3. **भोजन में निश्चित मियाद की सामग्री का उपयोग-** इसका महत्व त्यागी व्रतियों की दृष्टि से नहीं किन्तु स्वादिष्ट व पोषक भोज्य पदार्थ तैयार करने की दृष्टि से भी बड़ जाता है। साधन सामग्री के विवेकपूर्ण उपयोग का निर्देश स्पष्ट तौर पर जैन दर्शन के आलोचना पाठ में मिलता ही है।
4. **भक्ष्य-अभक्ष्य का बोध-** आरोग्य की दृष्टि से दैनिक चर्या में किस समय किस तरह के भोजन का सेवन योग्य है भोजन की थाली में किन पदार्थों को ऋतु विशेष अथवा समय विशेष या फिर किन्हीं अन्य पदार्थों के साथ नहीं लेना चाहिए इसका बोध आरोग्यप्रद जैन जीवन शैली में सहज ही मिलता है।
5. **पानी छानकर पीना तथा उबले हुए प्रासुक जल के प्रयोग की परम्परा** जैनों में विख्यात रही है जो अपितु उन्नत पहचान का प्रतीक है और जिसे आज पूरी दुनिया मंहगा खर्च करके अपनाने को विवश है आरो पलान्ट अथवा वाटर प्यूरीफायर के रूप में।
6. **रसोई व्यवस्थापक को अन्नपूर्णा** का स्थान प्राप्त है। आज की जीवनशैली ने इस उन्नत परम्परा को खुले चौक में लाकर इज्जत को दाँव पर लगा दिया है। पहले इज्जत ढक जाती थी कि रसोई में क्या है? यह कोई नहीं जानता था। इसके अलावा कोई जूठे या गंदे हाथ भी उसमें नहीं डालता था जिससे शुद्धता व स्वच्छता (तथा आरोग्य) दोनों का जतन होता था।
7. **भोजन तैयार होने साथ घर के बाहर चौक पूरना-** 'अतिथि देवो भवः' की परम्परा, "मुनि को भोजन देय फिर निज करे अहारे" की भावना आदि का उल्लेख जैन दर्शन में मिलता है। मुनि भले रोज न आएं किन्तु भोजन करने बैठने से पूर्व यह भावना अवश्य रहे कि मेरे घर कोई पात्र या जरूरतमंद व्यक्ति भोजन अवश्य ग्रहण करे। कोई भूखा न जाए। यह परम्परा जैनों में ही नहीं कमोवेश हर संस्कृति में विद्यामान रही है जिसमें करूणा व दया का भाव है, सह-भोजन की विभावना है। आधुनिक युग में अधिकांश अंचलो में यह प्रथा या तो लुप्तप्राय हो चली है या फिर दिखावे के दायरे में सिमट चली है।
8. **भोजन करने का ढंग-** परम्परागत रूप से हाथ पैर धोकर, ढीले वस्त्र पहनकर, आलती-पालती मारकर, मौन धारण कर एकाग्र चित्त से शुद्ध परिणामों के साथ रसोई में बैठकर भोजन करने चलन कुछ दशकों पहले तक हमारे परिवारों में था। लोग थाली में उतना ही लेते थे जितना वे खा सकते थे। हाँ उनोदरी अर्थात् भूख से कम खाने का अभ्यास भी साधक व सावधान श्रावक किया करते थे जो शरीर को स्वस्थ रखने और आलस्य को कम करने में मददरूप हुआ करता था। यह व्यवस्था विशेषकर विद्यार्थियो और साधनारत साधको के लिए अति उत्तम है। इसके साथ साथ संयमित अर्थात् सामान्य तौर पर दिन में ही दो बार ही भोजन करने का प्रचलन हमारे आदर्श व्यवहारों की विरासत में शामिल था।
9. **भोजन की थाली को इतने ऊँचे रखना कि** वह नाभि के थोड़ा ऊपर आ जाय। इससे भोजन पचाने में सुगमता रहती है। जबकि आज की पीढ़ी में चाहे जहाँ खड़े होकर, जूते चप्पल पहनकर खाने, थाली में लापरवाही से जूठा छोड़ देने की संवेदनहीन आदत घर करती जा रही है और इसके दुष्परिणामों की ओर ध्यान ही कहाँ है?
10. **सुबह जल्दी उठना, शुद्ध आवोहवा में घूमना**, खाने के बाद चलना एवं नियमित व्यायाम तथा रात्रि में समयसर विश्राम आदि भारतीय जीवनशैली के आरोग्यप्रद व्यवहार रहे हैं जो रोगों से दूर ले जाते है तथा

आहार के प्रमाण के साथ संतुलन बनाए रखने में मददगार सिद्ध होते हैं। आज हम काम का राग अलापकर एवं व्यस्तता की दुहाई देकर इनसे परे होते जा रहे हैं। अरे भई जब ये शरीर ही नहीं रहेगा तब इस कमाई का किसके लिए उपयोग करोगे, जिसके पीछे भागने में रात-दिन एक कर रहे हैं अथवा कमाने की आपाधापी में लगे हैं अथवा दिखावे का शान में अपनी मूलवृत्तियों से दूर हो रहे हैं।

11. यदि स्वस्थ अथवा निरोगी रहना है तो **खाने के लिए आयोजनबद्ध तरीके अपने पेट के चार हिस्से करो-** दो भाग पानी और दूध आदि पेय पदार्थ के लिए, एक भाग रोटी दाल सब्जी के लिए तथा एक भाग खाली रखो कभी बीमार नहीं पड़ोगे। दबा के खाओगे तो दवाखाने ही जाओगे। गांधीजी काम की प्रकृति के अनुरूप भोजन के प्रमाण की वकालत करते हैं। अर्थात जो मेहनतकश है उसे ही पूर्ण भोजन लेने का अधिकार है।

उपसंहार-

जैन व गांधी दर्शन सहित विभिन्न भारतीय दर्शनों में जीवनशैली के विकारों के प्रबन्धन हेतु कई सिद्धांत, आचरण एवं आदर्श व्यवहारों की व्याख्या की गई है जो सादगी और आरोग्यप्रद जीवनशैली का प्रतिनिधित्व करते हैं। वर्तमान प्रस्तावित अध्ययन में तुलनात्मक परिणाम जानने हेतु लिंग अर्थात् स्त्री-पुरूष, उम्र, शिक्षण, आजीविका का स्वरूप एवं परिमाण (कार्य वातावरण एवं कार्य के घण्टे), आय की नियमितता एवं प्रमाण आदि घटकों को सामिल किया गया है ताकि निष्पक्ष व असरकारक निष्कर्षों के करीब जाकर प्रभावी सामान्यीकरण किया जा सके। तय किया जा सकेगा कि इन घटकों का आरोग्यप्रद जीवनशैली एवं जैन दर्शन में निहित प्रतिमानों के साथ क्या तारतम्य है? कोई भी दर्शन जिसे व्यक्ति अपनाता है अथवा जिसके अनुरूप जीवन यापन करता है उसका प्रभाव उसकी जीवनशैली पर प्रकट होता है। इसका प्रभाव व्यक्ति के समूचे विकास अर्थात् शारीरिक, मानसिक, मनोवैज्ञानिक, आध्यात्मिक, नैतिक विकास आदि पर होता है। जैन व गांधी दर्शन संयमित जीवन, अपरिमित उपलब्धता के बाबजूद संसाधनों का मर्यादित उपयोग, आजीविका को जीवनोपयोगी होना, आजीविकोपार्जन में साधन शुद्धि का विचार, जरूरत के अनुरूप ही आजीविका का परिमाण सुनिश्चित करना, आजीविकोपार्जन का विस्तार तय करना तथा उसका उल्लंघन न करना ताकि अन्य के हितों पर कुठाराघात न हो, सभी के लिए आय के साधनों की नियमितता सुनिश्चित बनी रह सके, आय का न्यायोचित वितरण, अति एवं अनुचित संग्रहणवृत्ति न पनपे आदि की वकालत करता रहा है।

हम सभ्य समाज के जागरूक प्रतिनिधि होने नाते जैन एवं अन्य भारतीय दर्शन आधारित स्थापित व्यवस्थाओं का अभिन्न हिस्सा हैं। इसलिए नैतिकरूप से जीवनशैली के विकारों के कारणों की शोध हेतु आत्मावलोकन व दृढ़ इच्छाशक्तिजनित संकल्प के माध्यम से आरोग्य स्वराज लाने हेतु कदम बढ़ाएं और सच्ची आजादी का अनुभव करें व काराने में अपनी सक्रिय भूमिका सुनिश्चित करें तथा इसकी शुरूआत अपने से करें। आप बदलेंगे जग बदलेगा। तनाव, मानसिक संघर्ष, थकान अवसाद हमारी शाश्वत खुशियों को निगलते जा रहे हैं और हमें असमय में ही गंभीर रोगों का शिकार बनाते जा रहे हैं। जैन संस्कृति व गांधी विचार आधारित आरोग्यप्रद जीवनशैली ने दुनिया को सही दिशा नेतृत्व प्रदान किया है। इन जीवनशैली के विकारों को पहचानने, रोकने व शमन करने तथा उसके समुचित प्रबंधन हेतु कारगर उपायों की नितांत आवश्यकता है ताकि मानव जीवन को सही मायनों में सुखमय बनाया जा सके। जीवन दर्शन में शमन की क्रिया का आरम्भ संवर से होता है और सकाम निर्जरावृत्ति के द्वारा सर्वथा क्षय अथवा शमन होता है। इसमें दृढ़ संकल्प का भाव केन्द्रीय स्थान पर होता है। जीवनशैलीजनित विकारों की कुप्रथा को जड़ से नेस्तनाबूत करके खुद निरोगी रहते हुए

महज अपने विवेकपूर्ण कृत्य से दुनिया को निरोगी बनाने में भी अपना अमूल्य योगदान सुनिश्चित कर सकते हैं। हाँ यदि समय रहते नहीं संभला गया और योग्य कदम हम सभी ने नहीं उठाये तो हमारे अस्तित्व को मिटने से कोई नहीं रोक सकता। जीवनशैली के विकारों के शमन एवं प्रबंधन की दिशा में यह कदम बाल गंगाधर तिलक की भाँति सामूहिक उद्घोष करने में मील का पत्थर साबित हो सकेगा कि "आरोग्य स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है हम इसे स्थापित करके रहेगें तथा जीवनशैली के विकारों को मिटाकर रहेंगे"

संदर्भ-सूची

I. पं. दौलतरामजी- छहढाला
II. आचार्य उमास्वामीजी- तत्वार्थसूत्र
III. आचार्य महाप्रज्ञ (1998) " महावीर का आरोग्य शास्त्र", अनेकान्त भारती
IV. सम्पूर्ण गांधी वांग्मय
V. की टेक्सट ऑफ महात्मा गांधी- गांधीजी की आत्मकथा, मंगल प्रभात, रचनात्मक कार्यक्रम, दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास, मंगल प्रभात, अनासक्ति योग, हिन्द स्वराज आदि
VI. मोहनदास करमचंद गांधी " आपणा खोराकना प्रश्नो" नवजीवन प्रकाशन अहमदाबाद अनुवाद आर.के प्रभु
VII. डॉ. अभय बंग (2012) "हृदय रोग से मुक्ति" एक हृदय रोगी की आत्मकथा, राजकमल प्रकाशन नई-दिल्ली.
VIII. वैद्य अशोक तलाविया (2013) "आरोग्य संवाद" विश्व वात्सल्य मानव सेवा ट्रस्ट बगसरा (गुजरात)
IX. वैद्य अशोक तलाविया (2014) " विरोधी आहार रोगने नोतरे" विश्व वात्सल्य मानव सेवा ट्रस्ट बगसरा (गुजरात)
X. डॉ. गाला धीरेन (1997) " स्वयं स्वस्थ रहने की कला" नवनीत पब्लिकेशन्स
XI. डॉ. जितेन्द्र आर्य (1994) " प्राकृतिक जीवनशैली एवं रोग निवारण" नवजीवन प्रकाशन अहमदाबाद
XII. डॉ. रमेश कापड़िया " आरोग्य निर्माण " नवजीवन ट्रस्ट अहमदाबाद.
XIII. नयना गांवित एवं डॉ. लोकेश जैन " आदिवासी महिलाओं की जीवनशैली एवं आहार पोषण व्यवस्था" सम्पोषित परिवार कल्याण विषय पर म.दे. ग्रामसेवा महाविद्यालय द्वारा 2013 में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत लेख।
XIV. जिज्ञा आर. पटेल एवं डॉ. लोकेश जैन " सम्पोषित विकास में अवरोधक जीवनशैली के विकार" सम्पोषित परिवार कल्याण विषय पर म.दे. ग्रामसेवा महाविद्यालय द्वारा 9-10 फरवरी, 2013 में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत लेख।
XV. जैन (डॉ.) दीपा एवं **जैन** (**डॉ**.) **लोकेश** (2014) "सातत्यपूर्ण विकास का अर्थशास्त्र और जैन दर्शन प्रेरित अणुव्रती की जीवन शैली (अहिंसक अर्थतंत्रीय समाज रचना के संदर्भ में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन" जैन विद्या एवं प्राकृत विभाग तथा अर्थशास्त्र विभाग एम. एल. सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर में सापेक्षवादी अर्थशास्त्रः संतुलित एवं सतत विकास का आधार जैन विद्या के विशेष संदर्भ में विषय पर आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत पत्र।
XVI. जैन (डॉ.) दीपा "मनो-सामाजिक स्थितियों के संचालन में लेश्याओं की भूमिकाः सम्पोषित विकास की दृष्टि से एक विश्लेषण" शोधादर्श मासिक पत्र अंक- 76, नवम्बर2012- जनवरी,2013 ज्योति निकुंज चारबाग लखनऊ (उ.प्र.) में प्रकाशित, पृष्ठ- 97-100।

XVII. जैन (डॉ.) दीपा **"सम्पोषित विकास** की दिशा में जीवनलक्षी शिक्षण के स्वरूप के गठन हेतु भारतीय दर्शन में निहित मूल्यों की भूमिका का आंकलन "published in **ग्रामीण विकास समीक्षा- अंक-**52 NIRD Hyderabad. जुलाई- दिसम्बर, 2013 page 41–51 ISSN-0972-5881

XVIII. जैन (डॉ.) दीपा "जैन दर्शन में निहित सम्पोषित जीवन शिक्षण के आयाम- मानव समुदाय को हिन्दी संस्कृति की अनुपम दैन" **दीप शिखा- राजभाषा विशेषांक- 2014, बारहवां संस्करण भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ, नई दिल्ली पृष्ठ 20-25।**

XIX. जैन (डॉ.) दीपा "सम्पोषित विकास के मनोवैज्ञानिक आधार एवं जैन दर्शन (शांतिपूर्ण समाज की संरचना)" ग्रामीण प्रबंध अध्ययन केन्द्र गू.वि. अहमदाबाद द्वारा 9-10 जनवरी, 2012 मे आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत पत्र।

XX. जैन (डॉ.) दीपा "आरोग्य स्वराज लाने में सहायक जैन दर्शन" सम्पोषित परिवार कल्याण विषय पर म.दे. ग्रामसेवा महाविद्यालय द्वारा 9-10 फरवरी, 2013 में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत लेख।

XXI. जैन (डॉ.) दीपा एवं डॉ. लोकेश जैन "शांतिपूर्ण समाज की संरचना में निहित मनोवैज्ञानिक आधार (सम्पोषित विकास के संदर्भ में एक विश्लेषण)" शांति संशोधन केन्द्र, गू.वि. अहमदाबाद द्वारा 27-28 अगस्त, 2014 को आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत पत्र।

****

डॉ. दीपा जैन

मानद शोध निदेशक

प्राकृत एवं जैन दर्शन

जनसहभागिता विकास संस्थान

जयपुर

डॉ. लोकेश जैन

प्रोफेसर-ग्रामीण प्रबंध विभाग

प्रबंधन एवं प्रोद्योगिकी संकाय

गूजरात विद्यापीठ

गांधीनगर

Copyright © 2012 - 2017 KCG. All Rights Reserved. | Powered By: Knowledge Consortium of Gujarat